2 दिसम्बर 2006, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

जैन पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

श्रद्धा और चारित्र के इस संकट काल में कुन्दकुन्द के पंचपरमागमों में प्रवाहित ज्ञान गंगा में आकण्ठ निमज्जन ही परम शरण है।

-आ.कुन्दकुन्द व उनके परमागम,118

वर्ष : 29, अंक : 17 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये

दिसम्बर (प्रथम), 06 प्रबन्ध सम्पादक : **पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

छहढाला शिक्षण-शिविर सम्पन्न

दिल्ली : श्री अखिल भारतवर्षीय दि.जैन विद्वत्परिषद् (पंजीकृत) के तत्त्वावधान में सूरजमल-विहार जैन समाज दिल्ली द्वारा आयोजित छहढाला शिक्षण-शिविर 10 से 19 नवम्बर, 06 तक सानन्द सम्पन्न हुआ।

दिनांक 13 से 19 नवम्बर तक विद्वत्परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के प्रतिदिन सायंकाल छहढाला पर सारगर्भित विशेष व्याख्यान हुए। छहढाला की सायंकालीन नियमित कक्षा डॉ. अशोक जैन शास्त्री द्वारा एवं प्रातः व अपरान्ह की कक्षा ब्र. कल्पना बेन द्वारा ली गईं।

प्रारंभ में डॉ. जयकुमार जैन मुजफ्फरनगर, डॉ. सुरेशचंद जैन दिल्ली, डॉ. वीरसागर जैन दिल्ली एवं पं. राकेश शास्त्री लोनी के तलस्पर्शी व्याख्यानों से समाज में विशेष धर्म प्रभावना हुई।

इस अवसर पर दिल्ली के प्रमुख जिनालयों में डॉ. भारिल्ल कृत समयसार की ज्ञायकभाव प्रबोधनी हिन्दी टीका की 100 प्रतियाँ श्री विमलजी नीरू केमिकल्स विवेकविहार, दिल्ली वालों की ओर से भेंट की गईं। कार्यक्रम में लगभग बीस हजार का सत्साहित्य एवं सी.डी. की बिक्री हुई।

शिक्षण शिविर में विद्वत्परिषद् के सदस्य प्रा. कुन्दनलालजीजैन, डॉ. गुलाबचन्दजी जैन, डॉ. जयकुमारजी उपाध्ये, डॉ. सत्यप्रकाशजी जैन, पं. शीलचन्दजी जैन, पं. जयन्तिलालजी, पं. संदीपजी शास्त्री, पं. आशीषजी शास्त्री, पं. अमितजी शास्त्री, श्री सतीशजी जैन (आकाशवाणी), श्री अजितप्रसादजी जैन, श्री वीरसेनजी जैन, श्री आनन्दप्रकाशजी, श्री आदीशजी, श्री अखिलजी बंसल, पं. सोहनपालजी, पं. जयपालजी, श्रीमती ममताजी जैन एवं श्रीमती बिन्दुजी जैन आदि की उल्लेखनीय उपस्थिति रही।

स्वर्ण अक्षरों में अंकित होना चाहिये ...

डॉ. भारिल्ल द्वारा लिखित समयसार की ज्ञायकभाव प्रबोधिनी टीका को पढ़कर **डॉ. वि.धनकुमारजी जैन, प्राचार्य**-राजकीय संस्कृत विद्यालय गुराडियामान (झालावाड़) लिखते हैं ह्न

'स्वानुभव प्रमाण प्रदाता आचार्य कुन्दकुन्द तथा स्वरूप गुप्त आचार्य अमृतचन्द्र की अमृत आत्मख्याति की वाणी तथा आचार्य जयसेन की टीका में समाहित गाथाओं सहित समयसार की ज्ञायकभाव प्रबोधिनी नामक यह हिन्दी टीका अनेक विशेषताओं से युक्त सशक्त, सरल, सुबोधात्मक, सार्थक हिन्दी अनुशीलनात्मक कृति अद्यावधि तक प्रकाशन में नहीं आई थी; किन्तु इसे पाकर मैं धन्य हो गया हूँ।

निश्चित ही इसकी रचना अखिल विश्व के आत्मार्थी जैन बन्धुओं के लिये अहो भाग्य के मांगलिक अवसर का विषय होगा। यह टीका वास्तव में पंचमकाल की ऐसी आश्चर्यकारी ऐतिहासिक उपलब्धि है, जो भूतो न भविष्यति का अर्थ रखती है, इसे स्वर्ण अक्षरों में अंकित किया जाना चाहिये।

(शेष पृष्ठ 4 पर ....)

इंदिरा गाँधी प्रियदर्शिनी पुरस्कार से सम्मानित

सुप्रसिद्ध विद्वान पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के पुत्र युवाउद्यमी **श्री शुद्धात्मप्रकाश भारिल्ल,** जयपुर को इन्दिरा गाँधी प्रियदर्शिनी पुरस्कार, 06 से सम्मानित किया गया।

होटल ली मेरिडियन, नई दिल्ली में दिनांक 18.11.2006 को आयोजित भव्य समारोह में पूर्व राज्यपाल भीष्म नारायण सिंह, पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त जी.वी.जी. कृष्णमूर्ति, वेलजियम के राष्ट्रदूत पेट्रिक वेक्टर, तंजानिया की राजदूत ईरालिया नजारो सहित अनेक गणमान्य व्यक्तियों की उपस्थिति में केन्द्रीय मंत्री श्री पी.आई. किंदिया ने इन्हें यह पुरस्कार प्रदान किया।

इससे पूर्व यह पुरस्कार मदर टेरेसा जैसी विश्वप्रसिद्ध अनेक हस्तियों को मिल चुका है।

श्री भारिल्ल अपने करीब 30 हजार व्यावसायिक सहयोगियों के साथ देश भर में स्वतंत्र उद्यमिता एवं नैतिक जागरण के लिए कार्यरत हैं। उन्होंने अब तक करीब दस हजार परिवारों में आर्थिक स्वतंत्रता के लिए प्रेरणा का कार्य किया है। अपने इस अभियान में उनके देश भर में करीब 500 सेमिनार हो चुके हैं, जिनमें लगभग 4 लाख लोग भाग ले चुके हैं। विभिन्न संगठनों की ओर से उनके लगभग एक दर्जन टेप और सी.डी. भी जारी हो चुके हैं, जिन्हें लाखों लोगों ने सुना/देखा है।

इसके अतिरिक्त वे अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन के राष्ट्रीय मंत्री एवं पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर के सहमंत्री के रूप में भी समाज सेवाएँ दे रहे हैं।

सम्पादकीय –

ये तो सोचा ही नहीं

(गतांक से आगे...) – रतनचन्द भारिल्ल

१६. पश्चात्ताप भी पाप है

ज्ञानेशजी ने मोहन को संबोधते हुए पुन: कहा ह्न ''अरे मोहन! कहाँ खो गये ? क्या सोच रहे हो ?

संभलकर बैठते हुए मोहन ने कहा ह्न ''सचमुच हमारे तो दिन–रात पाप का ही चिन्तन चलता है, पाप की धुन में ही मग्न रहते हैं। धर्म ध्यान करना तो बहुत बड़ी बात है, हम तो धर्म ध्यान की परिभाषा भी नहीं जानते। यही कारण है कि ह्न कर की मालायें फेरते–फेरते युग बीत गया; पर मन का फेर नहीं गया।

मैं आपसे क्या छिपाऊँ ? आप तो मेरे सन्मार्गदर्शक हैं, मैंने अपने जीवन में बहुत पाप किये हैं। आपको ज्ञात हो या न हो; पर सच यह है कि मेरे दुर्व्यसनों के कारण मेरी पत्नी विजया तो जीवन भर परेशान रही ही, मेरी दोनों पुत्रियाँ धनश्री एवं रूपश्री भी सुखी नहीं रहीं। उनका भी सारा जीवन दु:खमय हो गया, बर्बाद हो गया।

उन्हें देख–देख मेरा मन आत्मग्लानि से इतना भर रहा है कि अब और कुछ करना–धरना सूझता ही नहीं है। धर्म–कर्म में भी मन बिल्कुल लगता ही नहीं है। उनके दु:ख की कल्पना मात्र से मेरा रोम–रोम रोमांचित हो जाता है, कलेजा काँप जाता है; अंग–अंग सिहर उठता है; आँखों से गंगा–जमुनी धारायें फूट पड़तीं हैं। कुछ समझ में नहीं आता, अब मैं क्या करूँ? कहते–कहते मोहन का गला भर आया। वह आगे कुछ न बोल सका।

मोहन ने स्वयं को संभाल कर अपनी बात को जारी रखते हुए कहा ह्न ''ज्ञानेशजी ! मेरी कहानी बड़ी विचित्र है। आप तो मात्र इतना ही जानते हो कि मैं आपके बालसखा धनेश का श्वसुर हूँ। संभवत: इससे आगे आपको कुछ भी पता नहीं है। कभी समय मिलने पर मैं आपको अपनी व्यथा–कथा कहकर अपने मन का बोझ कम करना चाहता हूँ। मैं अभी उस दुर्भाग्यपूर्ण कथा को कहकर आपका एवं इन जिज्ञासु जीवों का कीमती समय बर्बाद नहीं करना चाहता, पर क्या करूँ? कहे बिना रहा भी तो नहीं जाता। यदि आपकी आज्ञा हो तो.....''

ज्ञानेशजी ने सोचा ह्न ''इसके मन का बोझ कम करने के लिए इसके मन में उमड़ रहे मानसिक दु:ख के बादलों को बरसने का समय तो देना ही होगा; अन्यथा अपनी चर्चा इसके माथे के ऊपर से ही निकल जावेगी, अत: भावनाओं का विरेचन तो होना ही चाहिए।''

ऐसा विचार कर ज्ञानेशजी ने कहा ह्न ''कहो, अवश्य कहो !''

मोहन ने सोचा ह्न ''सबके सामने कहने में संकोच कैसा? जब जगत के सामने पाप करने में संकोच नहीं किया तो जगत के सामने प्रायश्चित्त करने में संकोच क्यों ?''

ऐसा निश्चय करके वह बोला ह्न ''ज्ञानेशजी ! जवानी के जोश में व्यक्ति होश खो बैठता है। ऊपर से यदि आर्थिक अनुकूलता मिल जाए तब तो फिर कहना ही क्या है ?

मेरे पिताजी बहुत बड़े व्यापारी तो थे ही, जमीन–जायदाद भी उनके पास बहुत थी। खेती से, साहूकारी से और व्यापार से अनाप–शनाप आमदनी थी उन्हें। सारे काम–काज तो उनकी देख–रेख मुनीम–गुमाश्ते और नौकर–चाकर ही करते थे। पिताजी का पुण्यप्रताप ऐसा था कि उनके प्रभाव से बड़े–बड़े बुद्धिमान और बलवान व्यक्ति उनकी सेवा में सदैव तैयार रहते और उनके इशारों पर दौड़–दौड़ कर काम करते। आज्ञा उल्लंघन करने की तो किसी की हिम्मत ही नहीं थी।

सामाजिक कार्यों में तो वे सिरमौर थे ही, राजनीति में भी थोड़ा–बहुत दखल रखते थे। इन सब कारणों से मेरा बचपन तो एक राजकुमार की तरह ठाठ–बाट से बीता ही, युवा होने पर भी मैंने कोई जिम्मेदारी महसूश नहीं की। मतलबी मित्रों के चक्कर में आ जाने से मदिरापान जैसे दुर्व्यसनों में फंस गया। बस, फिर क्या था ? दिन–रात अपने दोस्तों के साथ राग–रंग और मौज–मस्ती में समय बीतने लगा। बस, ऐसे में ही मेरा विवाह हो गया।

दुर्भाग्य से कुछ समय बाद ही पिताजी परलोक सिधार गये। पिता की मृत्यु से माँ अर्द्धविक्षिप्त–सी हो गई। मेरी विषयासक्त प्रवृत्ति एवं लापरवाही का लाभ उठाकर धीरे–धीरे जमीन जोतनेवाले किसानों ने जमीन हड़प ली। साहूकारी मुनीम–गुमाश्तों ने अपने–अपने हस्तगत कर ली। उचित देखभाल के अभाव में व्यापार उद्योग ठप्प हो गया। लेन–देन के चक्कर में धोखाधड़ी के झूठे आरोपों में मुझे दो वर्ष की जेल हो गई। ऐसे भावों के फलस्वरूप एक ही झकोरे में सब कुछ मिट्टी में मिल गया। पत्नी एवं पुत्र –पुत्रियाँ अनाथ हो गये। उनकी दुर्दशा की कल्पना मात्र से रोंगटे खड़े हो जाते हैं।''

ज्ञानेशजी ने आश्वस्त करते हुए कहा ह्न ''देखो, जो हो गया वह तो हो ही गया, उसके पछताने से अब होगा क्या ? भूत की भूलों को भूल जाओ, वर्तमान को संभालो, भविष्य अपने आप संभल जायेगा। ऐसे दु:खी होने से आर्तध्यान होता है, इससे भी पापबंध होता है। यह सब जो भी हुआ वह भी तो अपने पूर्व पाप के फल का ही परिणाम है, जो बोया है उसकी फसल तो उगेगी ही।

बोया पेड़ बबूल का। आम कहाँ से खाय?।।

एक श्रोता ने विनम्र भाव से कहा ह्न ''भाई ! आपके जीवन की इस घटना ने तो मानो पुराण–पुरुष राजा सत्यन्धर के इतिहास को ही दुहरा दिया है। रानी विजया के मोह में मूर्छित राजा सत्यन्धर के चरित्र पर टिप्पणी करते हुए पुराणकार ने ठीक ही लिखा हैह्न

विषयासक्त–चित्तानां गुण को वा न नश्यति।
न वैदुष्यं न मानुष्यं, नाभिजात्यं न सत्यवाक्।।

विषयों में आसक्त चित्तवालों में न विद्वता रहती है, न मनुष्यता रहती है, न बड़प्पन रहता है और न सत्यवचन ही रहते हैं।''

मोहन ने स्वीकार किया कि ह्न ''हाँ, भाई ! आप बिल्कुल ठीक कहते हैं। जब एक–एक विषय में आसक्त प्राणी अपने प्राण गंवा देते हैं तो पाँचों इन्द्रियों के विषयों में आसक्त प्राणियों का क्या कहना ? इसका प्रत्यक्ष उदाहरण मैं आपके सामने हूँ। अत: अपना कल्याण चाहनेवालों को इन इन्द्रियों के विषयों से दूर ही रहना चाहिए।'' ●

आज गोष्ठी का समय मोहन की बातचीत में ही पूरा हो गया; पर अधिकांश लोगों ने महसूस किया कि यह भी बहुत बड़ा काम हो गया। इस बात से मोहन के जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन तो आया ही, इनके प्रभाव में रहनेवाले और भी अनेक लोग लाभान्वित होंगे। ❋

१७. कुशल व्यापारी कौन ?

जो व्यक्ति नि:स्वार्थ भाव से विश्वकल्याण की भावना भाता है, समस्त प्राणियों के सदैव सुखी रहने की कामना करता है, सबका भला चाहता है सबसे नि:स्वार्थ धर्मवात्सल्य रखता है, प्राणीमात्र से मैत्री भाव रखता है।

जो सोचता है कि ह्न मेरे मन में समस्त प्राणियों से मैत्री हो, गुणी जनों को देख प्रमोद भाव उमड़े, विरोधियों के प्रति समता भाव हो और दुखियों के प्रति दया भाव रहे तथा दूसरों का शोषण किए बिना अपना पोषण करूँ ह्न ऐसी मंगलमय भावना रखनेवाले दूसरों के सुख के लिए जो भी मार्गदर्शन करते हैं, उससे दूसरों का लाभ तो होता ही है; स्वयं को भी पुण्य लाभ होता है और उस पुण्योदय से आजीविका आदि के लौकिक काम सहज ही सफल होते हैं। इसके विपरीत जो व्यक्ति येन–केन प्रकारेण केवल अपना स्वार्थ साधने की ही सोचता है, वह पाप का ही अर्जन करता है। इस बात को निम्नांकित उदाहरण से समझा जा सकता है ह्न

वैद्य मनीराम को दैवयोग से एक ऐसी संजीवनी औषधि उपलब्ध हो गई, जिससे मरणासन्न व्यक्ति भी अल्पकाल में पूर्ण स्वस्थ हो जाता है। इस अनुपम उपलब्धि की वैद्यजी को बहुत खुशी है। इस खुशी के दो कारण हो सकते हैं ह्न एक तो यह कि ''अब मैं इस औषधि के द्वारा रोगियों को निरोग करके उनके दु:ख को दूर कर सकूँगा, मरणासन्न व्यक्तियों को जीवनदान देकर उनका भला कर सकूँगा। मैं इस औषधि से जन–जन का उपचार करके अपने जीवन को धन्य कर लूँगा। मैं इसे धनार्जन का प्रमुख साधन नहीं बनाऊँगा। निर्धनों से कम से कम कीमत लेकर भ्रामरी वृत्ति से ही उनका उपचार करूँगा। जैसे भौंरा फूल को नुकसान पहुँचाये बिना ही उसका रस पीता है, मैं भी मरीज का शोषण किए बिना ही उसका उपचार करूँगा।'' ऐसी उज्ज्वल भावना से वह पैसा के साथ पुण्य भी अर्जित करता है।

दूसरा सोच यह भी हो सकता है कि ''अब मेरे हाथ ऐसी निधि लगी है, जिस पर मेरा ही एकाधिकार है, अत: मैं इससे मनमाने पैसे वसूलकर लाखों रुपये कमा सकता हूँ और कुछ दिनों में ही करोड़पति बन सकता हूँ। फिर क्या है, एक बड़ी–सी कोठी होगी, बड़ी–बड़ी गाड़ियाँ होंगी। नौकर–चाकर होंगे।

थोड़े से प्रचार करने की जरूरत है; फिर जिसे निरोग होना होगा, जान बचानी होगी; मजबूरन उसे मेरे पास आना ही पड़ेगा और जो मनमानी कीमत मैं मागूँगा; उसे चुकानी ही पड़ेगी। अमीर तो देंगे ही; गरीब भी देंगे। भले कर्ज करके दें, पर देंगे; क्योंकि जान तो उनको प्यारी होती है न ? इसी उद्देश्य से तो लोग गुणकारी/औषधीय वस्तुओं के पेटेन्ट कराकर अपना एकाधिकार सुरक्षित भी कराते हैं।''

ऐसे स्वार्थी व्यापारी लोग निष्ठुर विचारों से पाप कर्मों का बन्ध करते हैं, ऐसी खोटी भावना रखने से यह भी संभव है कि रोगी उसकी बात पर विश्वास ही न करें और उपचार कराने आयें ही नहीं; क्योंकि बुरे भावों का तो बुरा नतीजा ही होता है न ! इसप्रकार वह कभी करोड़पति बन ही नहीं सकेगा। उसका स्वप्न कभी साकार ही नहीं होगा। अत: परोपकार की भावना से ही काम करें। **दूसरों का शोषण करके अपना पोषण न करें, बल्कि दूसरों के पोषण की पवित्र भावना रखें तो आपका पोषण तो सहज में होगा ही।**

सफल व्यापारी की यही नीति होती है, और होनी चाहिए कि मुनाफे का प्रतिशत कम रखकर अधिक विक्रय करें, अधिक मुनाफा कमाने के प्रलोभन में बिक्री तो कम हो ही जाती है। धीरे–धीरे वह व्यक्ति या फर्म बदनाम भी हो जाता है, जिससे व्यापार ही फेल हो जाता है।

इसप्रकार हम देखते हैं कि निर्लोभी भावना से पुण्यार्जन के साथ धनार्जन भी गारण्टी से होता ही है। तथा लोभ की भावना से पापबन्ध होता है।

ज्ञानेशजी के ऐसे जनहित की भावना से ओत–प्रोत विचार सुनकर सभी श्रोताओं ने हार्दिक प्रसन्नता प्रगट की।

ज्ञानेशजी ने आगे कहा ह्न ''प्रत्येक बोल को विवेक की तराजू पर तौल–तौल कर ही बोलना चाहिए। जानते हो, बुद्धिमान और बुद्धु में क्या अन्तर है ? जो सोचकर बोलता है वह बुद्धिमान और जो बोलकर सोचता है वह बुद्धू।

ज्ञानी के निर्जरा का हेतु ...

सम्यग्दृष्टि ज्ञानी धर्मात्मा को क्रिया करते हुये एवं उसका फल भोगते हुये भी यदि कर्म बंध नहीं होता है और निर्जरा होती है तो उसका कारण उसके अन्दर विद्यमान ज्ञान और वैराग्य का बल ही है।

– सार समयसार, पृष्ठ–16

द्रव्य–गुण–पर्याय वर्ष का समापन

सिद्धवरकूट (म.प्र.) : यहाँ श्री जवरचन्द ज्ञानचन्द पारमार्थिक ट्रस्ट सनावद द्वारा सनावद, बेड़िया, बडवाह, खण्डवा, पिपलोनकला, पन्धाना, कसरावद, मण्डलेश्वर एव मलकापुर में विगत एक वर्ष से आयोजित द्रव्य–गुण–पर्याय वर्ष का समापन दिनांक 18 व 19 नवम्बर, 2006 को लगभग 400 व्यक्तियों की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर पंच परमेष्ठी विधान का आयोजन भी किया गया।

समारोह का उद्घाटन श्री कमलचन्दजी खण्डवा एवं ध्वजारोहण श्री राजबहादुरजी खण्डवा ने किया। विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री सिद्धेश्वरी जैन उपस्थित थीं।

श्री दिगम्बर जैन मण्डल मलकापुर व सनावद के बालकों द्वारा इस अवसर पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों की प्रस्तुति की गई।

सभी कार्यक्रमों का निर्देशन बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री ने किया तथा संचालन पण्डित रीतेशजी शास्त्री सनावद द्वारा किया गया।

ज्ञातव्य है कि द्रव्य–गुण–पर्याय वर्ष में 10 विषय रखे गये थे और प्रत्येक माह उन विषयों के आधार पर विकल्पात्मक प्रणाली से पेपर लिये गये। उन विषयों के नोट्स सभी परीक्षार्थियों को पहले से दिये जाते थे तथा तदनुसार ही परीक्षा ली जाती थी। यह सब कार्य पण्डित रीतेशजी शास्त्री के अथक् प्रयासों से सम्पन्न हुआ।

(स्वर्ण अक्षरों में अंकित ....पृष्ठ–1 का शेष...)

डॉ. भारिल्ल की यह टीका आचार्य कुन्दकुन्द के परमागमों का स्वाध्याय, पठन–पाठन, गहन चिन्तन–मनन का ही सुफल है। इसमें उनकी परम उत्कृष्ट भावना, जिनवाणी की सेवा करने की प्रबल प्रभावना व उत्सुकता स्वत: ही स्पष्ट होती है। इस टीका के माध्यम से आपने सम्पूर्ण विश्व के आध्यात्मिक समयसार पाठकों के लिये आत्महित का मार्ग प्रशस्तकर बहुत बड़ा उपकार किया है, जिसका मूल्य चुकाना असंभव है।

सामान्यरूप से अभी तक समाज में समयसार को स्वाध्याय के लिये बड़ा कठिन व अनुपयोगी समझा जाता था; किन्तु आपने उक्त विसंगत बात को उल्टा कर दिया है। यह टीका समयसार की विषयवस्तु, शैली व दृष्टि से आबाल–गोपाल सभी को बालबोध व छहढाला के समान समझने के लिये उपयोगी है। जिससे समयसार सबके लिये रुचिकर हो गया है।

इस टीका में ऐसा आनन्द अमृतरस भरा हुआ है कि जिसे नित्य प्रतिदिन रसास्वादन करके आत्मार्थी जन जीवन्त रहेंगे व तृप्त होंगे। इसमें बड़ाई जैसी कोई बात नहीं; किन्तु समाज को इस यथार्थ सत्य को नि:संकोच होकर स्वीकार करना चाहिये।

आपका यह प्रबल प्रयास पूज्य गुरुदेवश्री के विरह को भुलाने में काफी समर्थ है। अन्त में मैं यही आशा करता हूँ कि आप स्वस्थ रहते हुये प्रवचनसार व नियमसार ग्रन्थाधिराज की भी प्रबोधिनी टीका अवश्य लिखें। जो कि सबके हितार्थ होगा।'

चाह समयसार की

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की बहुचर्चित कृति **समयसार का सार** का क्रांतिकारी संत मुनिश्री तरुणसागरजी महाराज के बैंगलोर चार्तुमास के मध्य उन्हीं के संघ में विराजित **क्षुल्लक श्री प्रयत्नसागरजी** ने जब आद्योपान्त अध्ययन किया तो इस कृति से अत्यधिक प्रभावित होकर उन्होंने ग्रन्थाधिराज समयसार परमागम का सूक्ष्मता से अध्ययन करने की भावना व्यक्त की।

क्षुल्लकजी की भावनानुसार श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय जयपुर के स्नातक **पण्डित अनिलजी आलमान** हेरले को समयसार ग्रन्थ पढाने हेतु बुलाया गया।

दिनांक 16 सितम्बर से 16 अक्टूबर, 06 तक पण्डित अनिलजी आलमान ने समयसार के पूर्वरंग की 15 गाथाओं का सूक्ष्मता से अध्यापन किया। चातुर्मास समापन की ओर होने से यह क्रम आगे नहीं बढ सका; तथापि क्षुल्लक श्री प्रयत्नसागरजी ने भावना व्यक्त की कि अवसर मिलने पर टोडरमल महाविद्यालय से पढ़े विद्वानों के सान्निध्य में ही समयसार का अध्ययन करेंगे।

इस मंगल कार्य के होने में ब्र. यशपालजी की प्रेरणा तथा श्री आदिनाथ दि. जैन मंदिर बैंगलोर के संस्थापक श्री भबूतमलजी भण्डारी के सुपुत्र श्री रमेशजी भण्डरी व चम्पालालजी भण्डारी का सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ।

पंचकल्याणक वार्षिकोत्सव सम्पन्न

किशनगढ़ (राज.) : यहाँ हमीर कॉलोनी स्थित श्री महावीरस्वामी दिगम्बर जैन मंदिर हेतु हुये पंचकल्याणक की प्रथम वर्षगांठ पर दिनांक 20 एवं 21 नवम्बर,06 को दो दिवसीय वार्षिकोत्सव का आयोजन किया गया।

दि. 20 नवम्बर को सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति, बाल ब्र.जतीशचन्दजी शास्त्री के प्रवचन एवं वीर संगीत मण्डली किशनगढ़ द्वारा भक्ति संगीत का आयोजन किया गया।

दि. 21 नवम्बर को प्रात: मंगलकलश शोभायात्रा के उपरान्त जिनमंदिर पर श्री निहालचन्दजी ओसवाल के करकमलों से ध्वजारोहण किया गया।

इस अवसर पर श्री भागचन्दजी प्रदीपकुमारजी चौधरी परिवार की ओर से रत्नत्रय मण्डल विधान का आयोजन किया गया तथा जिनप्रतिमाओं का महा–अभिषेक एवं शिखर पर ध्वजा परिवर्तन हुआ।

दोपहर में ब्र.जतीशचन्दजी शास्त्री का मार्मिक प्रवचन हुआ। सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति तथा रात्रि में पण्डित संजीवकुमारजी गोधा के सारगर्भित प्रवचन के उपरान्त इन्द्रसभा का आयोजन किया गया।

विधान के समस्त कार्य ब्र.जतीशचन्दजी शास्त्री के निर्देशन में पण्डित सुनीलजी धवल भोपाल, पण्डित अमितजी शास्त्री लुकवासा एवं पण्डित निखिलजी शास्त्री कोतमा ने सम्पन्न कराये। **– राजेन्द्र चौधरी**

सर्वप्रथम कर्त्तव्य

एकाग्रता के बिना श्रामण्य नहीं होता और एकाग्रता उसे ही होती है; जिसने आगम के अभ्यास द्वारा पदार्थों का निश्चय किया है, अत: आगम का अभ्यास करना ही इस जीव का सर्वप्रथम कर्त्तव्य है।

ह्न आचार्य कुन्दकुन्द और उनके पंच परमागम, पृष्ठ : 69

श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड

श्री टोडरमल स्मारक भवन

ए–4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राजस्थान)

शीतकालीन परीक्षा कार्यक्रम सत्र–2007

दिन व दिनांक	नाम ग्रन्थ
शुक्रवार 12 जनवरी 2007	1. बालबोध पाठमाला भाग–1 (बा.प्रथम खण्ड) मौखिक 2. जैन बालपोथी भाग–1 (मौखिक) 3. वीतराग–विज्ञान पाठमाला भाग–1(प्रवेशिका प्रथम खण्ड) 4. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग–1 5. छहढाला (पूर्ण) 6. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) पूर्वार्द्ध 7. मोक्षमार्गप्रकाशक (पूर्वार्द्ध) 8. जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गोपालदासजी बरैया कृत) 9. विशारद प्रथम खण्ड (प्रथम वर्ष)
शनिवार 13 जनवरी 2007	1. बालबोध पाठमाला भाग–2 (बा.द्वितीय खण्ड) मौखिक 2. जैन बालपोथी भाग–2 (मौखिक) 3. वीतराग–विज्ञान पाठमाला भाग 2(प्रवेशिका द्वितीय खण्ड) 4. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग–2 5. द्रव्यसंग्रह (पूर्ण) 6. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) उत्तरार्द्ध 7. लघु जैनसिद्धान्त प्रवेशिका (सोनगढ़) 8. मोक्षमार्गप्रकाशक (उत्तरार्द्ध) 9. विशारद प्रथम खण्ड (द्वितीय वर्ष) 10. विशारद द्वितीय खण्ड (प्रथम वर्ष)
सोमवार 15 जनवरी 2007	1. बालबोध पाठमाला भाग–3 (बा.तृतीय खण्ड) मौखिक 2. वीतराग–विज्ञान पाठमाला भाग–3 (प्रवेशिका तृतीय खण्ड) 3. रत्नकरण्डश्रावकाचार (पूर्ण) 4. पुरुषार्थसिद्ध्युपाय (पूर्ण) 5. विशारद द्वितीय खण्ड (द्वितीय वर्ष)

नोट –

(1) सुविधानुसार परीक्षा का समय सुबह 9 बजे से शाम 5 बजे तक के बीच में कभी भी सैट किया जा सकता है।

(2) जहाँ एक से अधिक केन्द्र हों, वे आपस में मिलकर समय निश्चित करें।

(3) यदि किन्हीं विषयों के छात्र आपस में टकराते हों तो परीक्षा सुविधानुसार दिन में दो बार ली जा सकती है।

(4) बालबोध पाठमाला भाग 1, 2, 3 और जैन बालपोथी भाग 1 व 2 की परीक्षायें मौखिक लेवें। शेष सभी विषयों की परीक्षायें लिखित में लेवें।

अपनी ही भूल

कस्तूरीमृग कस्तूरी की गंध से आकर्षित होकर उस गंध के स्रोत की खोज में वन, उपवन, पर्वत और कंदराओं में इधर–उधर भटक रहा था; किन्तु उस स्रोत का पता न लगा सका और बाहर ही खोजता रहा। वह यही सोचता रहा कि यह गंध कहाँ से आ रही है ?

उस बेचारे को यह पता ही नहीं था कि कस्तूरी उसके स्वयं की नाभि में विद्यमान है, यदि वह सही स्थान अर्थात् अपने में खोजता तो उसे वह कस्तूरी अवश्य मिलती और वह सुखी होता। कहा भी है ह्न

सुख तेरे भीतर भरा, उसका कर श्रद्धान।
फिर क्यों बाहर खोजता, स्वयं सुख की खान।।

आज का शिक्षित मानव भी सुख–शान्ति को भौतिक वस्तुओं और विषय–कषायों में खोज रहा है तथा उसी में सुख मान रहा है, जो निश्चय से महादु:ख है। उसको भी यह पता नहीं है कि सुख व शान्ति बाहर नहीं; अपितु अपने अन्दर है, जिसका स्रोत एकमात्र आत्मा ही है।

जब तक यह जीव अन्तर्मुखी नहीं होगा, तब तक सुख–शान्ति से वंचित ही रहेगा अर्थात् उसे आत्मानुभूति नहीं होगी। स्वानुभूति प्राप्त करने के लिए अपने आत्मा में ही रमना, जमना, लीन होना पड़ेगा और जब तक यह जीव अपने आत्मा को नहीं पहिचानेगा, तब तक उसे धर्म भी प्रारम्भ नहीं होगा। कहा भी है ह्न

धरम–धरम सब कोई कहे, धरम न जाने कोय।
आतम को जाने बिना, धरम कहाँ से होय ?

अत: अपनी भूल को त्याग कर अपने आत्मा में लीन होने से स्वयं स्वानुभूतिमय हो जावेंगे। **ह्न महावीर बखेडी, बेलगाँव**

सामायिक केन्द्र का उद्घाटन

कायमगंज (उ.प्र.) : यहाँ श्री संभवनाथ दिगम्बर जिनमंदिर में दिनांक 5 नवम्बर को ध्यान व सामायिक केन्द्र का उद्घाटन ज्योतिर्विद पण्डित प्रकाशचन्दजी जैन मैनपुरी के करकमलों से सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर पण्डित अभिनवजी शास्त्री मैनपुरी द्वारा संगीतमय पंचपरमेष्ठी विधान का आयोजन किया गया। तथा श्री प्रमोदशरणजी जैन परिवार द्वारा **ह्रीं यन्त्र** स्थापित किया गया।

हार्दिक बधाई !

एलोरा (महा.) : श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक श्री गुलाबचन्दजी बोरालकर को श्री पार्श्वनाथ ब्रह्मचर्याश्रम गुरुकुल एलोरा के अन्तर्गत संचालित गुरुदेव समन्तभद्र विद्यामंदिर में प्राचार्य के पद पर एवं श्री सुकुमारजी नवले को पर्यवेक्षक पद पर नियुक्त किया गया।

इस अवसर पर संस्था के अध्यक्ष श्री तनसुखलालजी ठोलिया तथा मंत्री श्री पन्नालालजी गंगवाल आदि उपस्थित थे।

समारोह में राष्ट्रपति से शिक्षक सम्मान प्राप्त पूर्व प्राचार्य श्री निर्मलकुमारजी ठोलिया को भावभीनी विदाई दी गई।

अल्पवय में प्राप्त इस उपलब्धि हेतु महाविद्यालय परिवार एवं जैन पथप्रदर्शक समिति की ओर से हार्दिक बधाई !

तत्त्वचर्चा

प्रवचनसार का सार 64

– डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

चौबीसवाँ प्रवचन

प्रवचनसार परमागम की चरणानुयोगसूचक चूलिका पर चर्चा चल रही है। उसमें शुभोपयोगप्रज्ञापन नामक अवान्तर अधिकार के अन्तर्गत अभी तक यह बात स्पष्ट की जा चुकी है कि छटवें-सातवें गुणस्थानवर्ती मुनिराज जब शुभोपयोग में होते हैं, तब उनका व्यवहार कैसा होना चाहिए ?

अब, इसी संदर्भ में श्रमणाभासों की समस्त प्रवृत्तियों का निषेध करनेवाली गाथा 263 की टीका भी द्रष्टव्य है –

''जिनके सूत्रों में और पदार्थों में विशारदपने के द्वारा संयम, तप और स्वतत्त्व ज्ञान प्रवर्तता है; उन श्रमणों के प्रति ही अभ्युत्थानादिक प्रवृत्तियाँ अनिषिद्ध हैं; परन्तु उनके अतिरिक्त अन्य श्रमणाभासों के प्रति वे प्रवृत्तियाँ निषिद्ध ही हैं।''

इस टीका में इन अभ्युत्थानादिक प्रवृत्तियों को अनिवार्य किसी के लिए भी नहीं कहा है अर्थात् जो अपनी साधना में लगे हैं, उन्हें अपनी साधना छोड़कर ये प्रवृत्तियाँ करना आवश्यक नहीं है। जो स्वयं से हीन है, उनके प्रति तो ये प्रवृत्तियाँ निषिद्ध है तथा जो तत्त्वज्ञान से रहित हैं, उनके प्रति ये प्रवृत्तियाँ गृहीत मिथ्यात्व हैं।

यहाँ प्रश्न अकेला काय की नमस्कारादि क्रिया का नहीं है; अपितु जिनके प्रति हमारे हृदय में श्रद्धा होगी, वह श्रद्धा अधिक खतरनाक है; क्योंकि हम उनका मार्गदर्शन भी स्वीकार करेंगे, उन्हें आदर्श मानकर उनके जीवन का अनुकरण भी करेंगे; तब उनके मिथ्यात्व की सारी प्रवृत्तियाँ हमारे जीवन में आने की संभावना बनी ही रहती है; इसलिए उनके प्रति समस्त क्रियाओं को निषिद्ध कहा है।

तदनन्तर, 'कैसा जीव श्रमणाभास है ?' यह बतानेवाली गाथा 264 की टीका का भाव इसप्रकार है –

''आगम का ज्ञाता होने पर भी, संयत होने पर भी, तप में स्थित होने पर भी, जिनोक्त अनंत पदार्थों से भरे हुए विश्व को – जो कि अपने आत्मा से ज्ञेयरूप से पिया जाता होने के कारण आत्मप्रधान है, उसका जो जीव श्रद्धान नहीं करता, वह श्रमणाभास है।''

टीका में अत्यन्त स्पष्ट रूप से कहा है कि कोई मुनिराज आगम के ज्ञाता भी हैं, संयमी भी हैं और तपस्वी भी हैं; लेकिन उन्हें आत्मा का ज्ञान नहीं है, तो वे हमारे लिए पूज्य नहीं हैं; अपितु श्रमणाभास हैं।

इस संदर्भ में मैं यह बताना चाहता हूँ कि आजकल कोई भी व्यक्ति आत्मा के ज्ञान का प्रश्न नहीं उठाता है; अपितु क्रिया के आधार पर ही एक-दूसरे पर दोषारोपण करते हैं। वे एक-दूसरे पर महाभ्रष्ट होने का आरोप लगाते हैं तथा अपनी क्रियाओं को ठीक बताते हैं। 'आत्मा का ज्ञान है या नहीं ?' यह तो मुद्दा ही नहीं है; बस सर्वत्र तप, संयम और आगमज्ञान की ही बात होती है।

जो लोग शिथिलाचार के विरोधी हैं; वे भी श्रद्धा का प्रश्न नहीं उठाते हैं। उन्हें सिर्फ आचार की शिथिलता की ही चिंता है। किसी को भी तत्त्वज्ञान के श्रद्धान का विकल्प ही नहीं है।

टीका में इस बात पर भी दृष्टिपात किया गया है कि जिनेन्द्र भगवान ने कहा है कि विश्व में अनन्तपदार्थ भरे हुए हैं। 'ज्ञेयरूप से पिया जाता होने के कारण' का तात्पर्य यह है कि सारी दुनिया अर्थात् सारे ज्ञेयों को आत्मा ने पी लिया है अर्थात् जान लिया है। यहाँ यह स्पष्ट किया जा रहा है कि कोई लोकालोक को जाननेवाले आत्मा को न जानता हो, आचरण भी ठीक हो, शास्त्रज्ञान भी हो, तपस्वी भी हो; किन्तु यदि वह आत्मा को नहीं जानता हो तो वह श्रमणाभास है।

यहाँ आत्मा को ही प्रधान इसलिए कहा; क्योंकि आत्मा ने ही सारे ज्ञेयों को पिया है अर्थात् जाना है। सकलज्ञेय को जाननेवाला होने पर भी जो आत्मा को नहीं जानता हो; वह तपस्वी, संयमी और आगमज्ञानी होने पर भी श्रमणाभास है।

जिनका ज्ञान, श्रद्धान और आचरण ठीक है; उनका भी अनुमोदन (आदर) न करनेवाले का विनाश बतलानेवाली गाथा 265 की टीका का भाव इसप्रकार है –

''जो श्रमण द्वेष के कारण शासनस्थ श्रमण का भी अपवाद करता है और उसके प्रति सत्कारादि क्रियायें करने में अनुमत नहीं है; वह श्रमण द्वेष से कषायित होने से उसका चारित्र नष्ट हो जाता है।''

टीका के उपरोक्त कथन में अत्यधिक संतुलन है। इसमें आचार्यदेव यह कहते हैं कि कोई सर्वज्ञता को स्वीकार करता है, आत्मा को जानता है, आत्मानुभवी है; किन्तु उनके साथ किसी अन्य व्यक्ति का व्यक्तिगत मनमुटाव है तो वह कहता है कि उनसे हमारा कोई मतभेद नहीं है, बस वे हमें पसंद नहीं है – इसप्रकार मान के कारण यदि विरोध करता है तो वह गलत रास्ते पर है। ऐसा कहनेवाले भी बहुत लोग हैं कि उनकी सब बातें ठीक लगती है, कोई शिकायत नहीं है; लेकिन व्यवहार ठीक नहीं है, पोस्टकार्ड का भी जवाब नहीं देते हैं। इसप्रकार जो अपनी व्यक्तिगत अरुचि के कारण विनयमर्यादाओं को नहीं निभाता है, वह गलत है।

निरपेक्ष गुरु का तात्पर्य यह है कि उन्होंने हमारा व्यक्तिगत उपकार किया है या नहीं किया है ह्न इसकी कोई अपेक्षा नहीं है; किन्तु वे २८ मूलगुणों के धारी हैं, छटवें-सातवें गुणस्थान की भूमिका में हैं। ऐसे निरपेक्ष गुरु यदि हमारे सामने आ जाए तो अभ्युत्थानादि विनय की क्रियाएँ करना ही चाहिए। उन निरपेक्ष गुरुओं के साथ ऐसा नहीं चलेगा कि हम तो देव-शास्त्र-गुरु की पूजन कर लेते हैं या णमोकार मंत्र में नमस्कार कर लेते हैं तो उनको भी नमस्कार हो ही जाता है। यदि वे निरपेक्ष गुरु सच्चे हैं और हमारे सामने आते हैं, उस समय यदि हम अन्य कारणों से अभ्युत्थानादि क्रियाएँ नहीं करते हैं तो यह सही नहीं है।

सापेक्ष गुरु वे होते हैं, जिन्होंने हमारा प्रत्यक्ष उपकार किया है, चाहे

वे मुनि हो या सामान्य गृहस्थ। यद्यपि चौथे गुणस्थानवाले हमारे देव–शास्त्र–गुरु जैसे गुरु नहीं है; किन्तु उन्होंने हमारा साक्षात् उपकार किया हो, उनसे देशना मिली हो तो वे सापेक्ष गुरु हैं। यद्यपि उनके साथ देव–शास्त्र–गुरु जैसा स्वागत–सत्कार व्यवहार नहीं होगा; फिर भी उनका यथोचित विशेष सम्मान तो होगा ही।

एक पत्नी जितना आदर–सत्कार अपने पति का करेगी, उतना दुनिया के किसी भी पुरुष का नहीं करेगी। उसीप्रकार सापेक्ष गुरुओं का जितना सम्मान होगा, उतना उनके गुरु के गुरु का भी नहीं होगा।

इसप्रकार सापेक्ष गुरु और निरपेक्ष गुरु के भेद से गुरु दो प्रकार के हैं। इस चरणानुयोगसूचक चूलिका नामक प्रकरण में निरपेक्ष गुरुओं की चर्चा चल रही है। 'इन निरपेक्ष गुरुओं ने हमारा साक्षात् क्या उपकार किया है ?' इससे हमें कुछ लेना–देना नहीं है; किन्तु यदि छटवें–सातवें गुणस्थान के योग्य उनका ज्ञान, चारित्र और आत्मानुभव है तो उनका अभ्युत्थान, अष्टद्रव्य से पूजन, विनय, सत्कारादि करना ही चाहिए।

इसके बाद 'सत्संग' विधेय हैं ह्न यह बतलानेवाली गाथा 270 की टीका का भाव इसप्रकार है –

''आत्मा परिणामस्वभाववाला है; इसलिए अग्नि के संग में रहे हुए पानी की भाँति संयत के भी लौकिक संग से विकार अवश्यंभावी होने से संयत भी असंयत ही हो जाता है। इसलिए दु:खमोक्षार्थी (दु:खों से मुक्ति चाहनेवाले) श्रमण को (1) समान गुणवाले श्रमण के साथ अथवा (2) अधिक गुणवाले श्रमण के साथ ही सदा निवास करना चाहिये। इसप्रकार उस श्रमण के (1) शीतल घर के कोने में रखे हुए शीतल पानी की भाँति समान गुणवाले की संगति से गुणरक्षा होती है और (2) अधिक शीतल हिम के संपर्क में रहनेवाले शीतल पानी की भाँति अधिक गुणवाली के संग से गुणवृद्धि होती है।''

इस टीका में यह कहा है कि यदि मुनिराज एकलविहारी हैं तो सर्वश्रेष्ठ हैं, उनका किसी के साथ रहना अनिवार्य नहीं है। आर्यिकाओं के संबंध में इसके विपरीत नियम है कि आर्यिकाओं को कभी भी अकेले नहीं रहना चाहिए, कम से कम दो आर्यिकाओं को साथ–साथ रहना चाहिए। तदनन्तर आचार्यदेव ने टीका में यह मार्गदर्शन दिया है कि यदि मुनिराजों को किसी के साथ में रहना पड़े, तो किनके साथ रहे ?

इसके उत्तर में कहा गया है कि मुनिराजों को अपने से अधिक गुण वालों के साथ रहना चाहिए। यदि उनका समागम संभव नहीं हो, तो समान गुणवालों के साथ रहना चाहिए; किन्तु लौकिकजनों के साथ नहीं रहना चाहिए; क्योंकि लौकिकजनों के संयोग में भ्रष्ट हो जाने की संभावना है।

कई मुनिराज भक्तों से घिरे रहते हैं, वे अपने गुणों के समान गुणवालों के साथ भी नहीं रहते हैं तथा अधिक गुणों वाले अपने गुरु के पास भी नहीं रहते हैं तथा अन्य लौकिकजनों से घिरे रहते हैं; उनका भ्रष्ट होना निश्चित ही है।

जिस दिन गोविंदबल्लभ पंत का स्वर्गवास हुआ था; उस दिन नेहरुजी ने अपनी श्रद्धांजलि में एक वाक्य कहा था कि आज वह अंतिम व्यक्ति भी चला गया है जो मेरा हाथ पकड़कर यह कह सकता था कि 'नेहरु यह गलत है'। अब मेरी चिंता यह है कि यदि मेरे से कोई गलत काम होगा तो कोई उसे गलत कहनेवाला नहीं है।

इसके बाद टीका में उदाहरण देकर स्पष्ट किया है कि समान गुणवाले श्रमण के साथ निवास करने से शीतल घर के कोने में रखे हुए शीतल पानी की भाँति गुण रक्षा होती है और अधिक शीतल हिम के संपर्क में रहनेवाले शीतल पानी की भाँति गुणवृद्धि होती है।

यह तो मुनिराजों के संदर्भ में कथन हुआ; किन्तु यदि गृहस्थों के संदर्भ में बात करें तो जो गृहस्थ अपने से ज्यादा गुणवालों की संगति करेगा, उसे लौकिक दृष्टि से कदाचित् मान की हानि हो सकती है; क्योंकि सभी लोग अधिक गुणोंवाले का सम्मान करेंगे, उसका नहीं; अतएव लौकिक दृष्टि से कमगुणवालों को अपने से अधिक गुणवालों के साथ संगति करने में हानि ही हानि नजर आती है; पर बात ऐसी नहीं है; क्योंकि यदि आध्यात्मिक दृष्टि से विचार किया जाय तो उसे लाभ ही लाभ है। अधिक गुणवालों के साथ रहने से उसे कुछ न कुछ सीखने को मिलेगा ही; अधिक गुणवाले को हानि ही हानि है; क्योंकि उसे तो कुछ नया सीखने मिलने वाला ही नहीं है तथा वह जितने समय तक अपने से कम गुणवालों को सिखाएगा; उसका उतना समय भी बर्बाद होगा।

यदि कोई टोडरमल स्मारक भवन में आकर रहे तो वहाँ पर तो दो सौ पण्डित हैं – ऐसी स्थिति में हो सकता है प्रवचन करने के लिए उसे अवसर ही न मिले; किन्तु '**निरस्पादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते**' अर्थात् जहाँ वृक्ष नहीं होते हैं, वहाँ पर एरण्ड का वृक्ष भी बड़ा वृक्ष माना जाता है; उसीप्रकार यदि वह व्यक्ति ऐसे स्थान पर रहता है; जहाँ पण्डित नहीं है, तो वहाँ पर सबसे बड़ा पण्डित बन जावेगा; किन्तु सीखने की दृष्टि से हानि ही है।

इसप्रकार आचार्यदेव ने समानगुणवालों तथा अधिक गुणवालों के साथ रहने के लिए मार्गदर्शन दिया है।

अब समस्या यह है कि जो सबसे अधिक गुणवाला व्यक्ति है; वह किसके पास रहेगा ?

ऐसे लोग जिनकी बराबरी के या जिनसे उच्च गुणधर्मवाले व्यक्ति नहीं हों, उनके लिए उक्त सलाह नहीं है; क्योंकि वे स्वयं में इतने बड़े हैं कि स्वयं को भी सँभाल सकते हैं तथा अपने संयोग में रहनेवालों को भी सँभाल सकते हैं। वे तो एक अपवाद हैं; अत: यह नियम उन पर लागू नहीं होता।

इसप्रकार यहाँ शुभोपयोगप्रज्ञापन नामक अवान्तर अधिकार समाप्त होता है; जिसमें यह बताया गया है कि मुनिराजों का स्वरूप कैसा होता है तथा उनका आचरण कैसा होना चाहिए, उन्हें किनकी संगति में रहना चाहिए तथा किसको नमस्कार करना चाहिए ? **(क्रमश:)**

2 दिसम्बर 2006, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

जैन न्याय नय शिक्षण-शिविर सम्पन्न

दिल्ली : श्री अ. भा. दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् के तत्त्वावधान में ऋषभ विहार दि. जैन मन्दिर में स्थानीय समाज द्वारा जैन न्याय-नय ज्ञान पर विशेष शिक्षण शिविर 13 से 25 अगस्त तक आयोजित किया गया। शिविर में विद्वत्परिषद् के कोषाध्यक्ष डॉ. अशोक जैन शास्त्री ने प्रतिदिन कक्षाओं के माध्यम से जिज्ञासुओं को विषय का प्रतिपादन किया।

डॉ. अशोक जैन शास्त्री सम्मानित

दिल्ली : नैतिक शिक्षा एवं धर्म प्रभावना के क्षेत्र में उल्लेखनीय सेवाओं के लिए श्री अ.भा. दि. जैन विद्वत्परिषद् के कोषाध्यक्ष डॉ. अशोक जैन शास्त्री को प्रकाश 'हितैषी' पुरस्कार विद्वत्परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल द्वारा प्रदान कर सम्मानित किया गया। पुरस्कार स्वरूप पाँच हजार की धनराशि, शॉल, प्रशस्ति पत्र एवं प्रतीक चिन्ह भेंट किया गया। समारोह की अध्यक्षता दिगम्बर जैन समाज दिल्ली के अध्यक्ष श्री चक्रेश जैन ने की। मुख्य अतिथि प्रसिद्ध उद्योगपति श्री त्रिलोकचन्द कोठारी एवं विशिष्ट अतिथि प्राचार्य श्री कुन्दनलाल जैन थे। सभा का संचालन श्री सतीश जैन आकाशवाणी द्वारा किया गया। समारोह में संस्था के महामंत्री डॉ. सत्यप्रकाश जैन एवं प्रचार मंत्री श्री अखिल बंसल के अतिरिक्त विद्वत्परिषद् दिल्ली प्रदेश के अनेक गणमान्य सदस्य उपस्थित थे।

शिविर सम्पन्न

दिल्ली : श्री दि. जैन कुन्दकुन्द कहान स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट, न्यू उस्मानपुरा के तत्त्वावधान में आयोजित शिविर में दि. 28 अक्टूबर से 13 नवम्बर तक बा. ब्र. कल्पना बेन के मार्मिक प्रवचन एवं कक्षाओं का लाभ समाज को मिला। प्रात: गोम्मटसार कर्मकाण्ड की कक्षा के उपरान्त दोपहर में न्यायदीपिका की कक्षा, शंका-समाधान एवं बालकक्षा आयोजित हुई। प्रतिदिन रात्रि में कल्पना बेन के सम्यक्त्व की पूर्व भूमिका विषय पर मार्मिक प्रवचन हुए। **– ऋषभ शास्त्री**

(आगामी ...)

विद्वत्परिषद् का सम्मेलन बाँसवाड़ा में

श्री अ. भा. दि. जैन विद्वत्परिषद् का राष्ट्रीय सम्मेलन बाँसवाड़ा में पंचकल्याणक के मध्य **दिनांक 4 दिसम्बर** को आयोजित है। समारोह की अध्यक्षता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल करेंगे। इस अवसर पर राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक भी आयोजित है; अतः कार्यकारिणी के सदस्य अवश्य उपस्थित हों। **सम्पर्क करें ह्न** पण्डित राजकुमार शास्त्री 'ध्रुवधाम' 1/15 खन्दू कालोनी बाँसवाड़ा (राज.) मो. 09414103492

ह्न अखिल बंसल, *प्रचार मंत्री*

वैराग्य समाचार

1. कोडरमा निवासी श्रीगोरीलालजी सेठी की स्मृति में उनके पुत्र श्री सुरेशकुमारजी एवं अशोककुमारजी सेठी की ओर से पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट को 5001/- रुपये की राशि प्राप्त हुई।

2. मैनपुरी निवासी पण्डित महेन्द्रकुमारजी सिंघई करहलवालों का दिनांक 28 अक्टूबर को शांतपरिणामों से देहावसान हो गया है। आप सरल व्यक्तित्व और तत्त्वरसिक थे। आपकी स्मृति में श्री प्रमोदजी, डॉ. राजेशजी एवं मनोजजी की ओर से जैनपथप्रदर्शक समिति एवं वीतराग-विज्ञान को 1001/-रुपये की राशि प्राप्त हुई।

3. सागर निवासी श्रीमंत परिवार के होनहार नवयुवक श्री संजयजी जैन का दिनांक 7 नवम्बर, 2006 को 41 वर्ष की अल्पायु में कार दुर्घटना से आकस्मिक निधन हो गया। आप कर्मठ, लगनशील एवं उत्साही कार्यकर्त्ता होने के साथ ही अखिल भारतीय तारण-तरण मण्डल के मुख्य प्रेरणास्रोत भी थे।

ज्ञातव्य है कि आप **पूर्व सांसद श्री डालचंदजी जैन** के अनुज श्री प्रेमचन्दजी जैन के छोटे सुपुत्र थे।

4. श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक पण्डित ध्रुवेशजी शाह, मुम्बई के पिता श्री मणिकान्तभाई शाह का 58 वर्ष की आयु में हृदयगति रुक जाने से देहावसान हो गया है।

आपने अनेक बार सोनगढ़ जाकर गुरुदेवश्री के प्रवचनों का प्रत्यक्ष लाभ लिया तथा जीवनपर्यन्त इसी तत्त्वज्ञान की धारा से जुड़े रहे। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक को 101/-रुपये प्राप्त हुये हैं।

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही चतुर्गति के दु:खों से मुक्त हो निर्वाण की प्राप्ति करें और उनके परिवार को तत्त्वज्ञान के बल से यह दु:ख सहन करने की शक्ति प्राप्त हो ह्न यही भावना है। **– प्रबन्ध सम्पादक**

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

24 दिस. से 28 दिसम्बर	**देवलाली**	**विधान एवं शिविर**
23 से 25 जनवरी, 07	**चन्देरी**	**छहढाला शिविर**
25 से 31 जनवरी, 07	**बीना**	**पंचकल्याणक**
02 से 06 फरवरी, 07	**मंगलायतन**	**वार्षिकोत्सव**
15 से 21 फरवरी, 07	**अलवर**	**पंचकल्याणक**

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा,**डबल एम.ए.जैनविद्या व धर्मदर्शन; इतिहास, नेट एवं **पण्डित जितेन्द्र वि.राठी,** साहित्याचार्य
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
फैक्स : (0141) 2704127